आज गुरुवार १४ जून, २०१८ सौर ३१ ज्येष्ठ सं. २०७५ वि.

सुभाषित

परम ब्रह्म मायासे अत्यन्त परे है। वह परमात्मा बोध स्वरूप जाननेके योग्य तथा तत्व ज्ञानसे प्राप्त करने योग्य है।
❐ श्रीमद्भगवद्गीता

बड़ी कारवाई जरूरी

पाकिस्तान कायराना हरकतोंसे बाज नहीं आ रहा है। उसने अपने वादेके खिलाफ संघर्षविरामका फिर उल्लंघन किया है। जम्मू-कश्मीरके सांबा जिलेके चांब्लियाल सेक्टरमें मंगलवारको देर रातमें पाकिस्तानी रेंजर्सने भारतीय चौकियोंको निशाना बनाते हुए गोलीबारी की, जिसमें सीमा सुरक्षा बलके चार जवान शहीद हो गये। पांच जवान घायल भी हुए हैं। सीमा सुरक्षा बलके जवानोंने पाकिस्तानी गोलीबारीका मुंहतोड़ जवाब दिया है और पाकिस्तानको भी भारी क्षति पहुंची है। चार शहीद जवानोंमें सीमा सुरक्षाबलका एक असिस्टेंट कमाण्डेण्ट भी शामिल है। मंगलवारको ही पाकिस्तानने आतंकी हमले भी करवाये थे। पुलवामा न्यायालय परिसरमें पुलिस गार्ड पोस्टपर आतंकी हमलेमें दो जवान शहीद हो गये और तीन घायल हुए हैं। हमलावर आतंकी शहीद जवानकी रायफल लेकर भाग गये। सुरक्षाबलोंने सर्च आपरेशन शुरू कर दिया है। भारत और पाकिस्तानमें पिछले एक पखवारेके अन्दर दो बार संघर्षविराम समझौतेका पूरी तरह पालन करनेकी सहमति बनी थी। पाकिस्तानी सेनाके अधिकारीने भरोसा दिलाया था कि गोलीबारी नहीं की जायगी लेकिन इस भरोसेका कोई मतलब नहीं रह गया है। पाकिस्तान एक ओर आतंकियोंसे हमले करा रहा है तो दूसरी ओर अपने सैनिकोंसे गोलीबारी करानेमें पीछे नहीं है। स्वराष्ट्रमंत्री राजनाथ सिंह पिछले दिनों कश्मीरके दौरेपर गये हुए थे। कश्मीरमें उनकी मौजूदगीके दौरान हमले कराये गये। इसका अर्थ साफ है कि पाकिस्तान संघर्षविराम नहीं चाहता है। सेना और आतंकी संघटन मिलकर हमलेकर रहे हैं। ऐसी स्थितिमें पाकिस्तानके खिलाफ बड़ी सैन्य कारवाई करनेकी जरूरत है जिससे कि उसे भारी क्षति पहुंचे। पाकिस्तानको उसीकी भाषामें समझानेकी जरूरत है और इसमें देर करना उचित नहीं है। भारतीय सेना पाकिस्तानको तबाह करनेमें पूरी तरह सक्षम है। प्रतिदिन हमारे जवान शहीद हों, यह शर्मकी बात है। बेहया और कायरोंके साथ वैसा ही आचरण होना चाहिए जिसकी भाषा वह समझ सकें। पाकिस्तान दुनियासे कटता जा रहा है। कुछ देश, जो उसके साथ खड़े रहते थे, अब बदली परिस्थितियोंमें वे भी अपना मुंह छिपाने लगे हैं। अब बड़ी कारवाई करनेका समय आ गया है।

परीक्षाओं की शुचिता

प्रतिस्पर्धी परीक्षाओंकी शुचितापर सर्वोच्च न्यायालयने मंगलवारको महत्वपूर्ण टिप्पणी करते हुए कहा है कि यदि अदालतें परीक्षाएं करानेवाले प्राधिकारोंके फैसलोंमें हस्तक्षेप करती रहेंगी तो परीक्षाओंकी शुचिताको क्षति पहुंचेगी। न्यायमूर्ति यू.यू. ललित और न्यायमूर्ति दीपक गुप्तकी अवकाश पीठने उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोगकी अवर अधीनस्थ सेवा परीक्षापर रोक लगाने या रद किये जानेसे सम्बन्धित मांग किये जानेवाली याचिकापर यह टिप्पणी की है। शीर्ष न्यायालयका मानना है कि इस सम्बन्धमें एक सीमा रेखा खींची जानी चाहिए कि परीक्षा करानेवाले प्राधिकारोंके फैसलोंकी किस सीमातक न्यायिक समीक्षाकी अनुमति हो सकती है। प्रतिभागी छात्रोंने आरोप लगाया है कि पिछले वर्ष हुई प्रारम्भिक परीक्षामें पूछे गये कई प्रश्नोंके जवाब गलत थे। आयोगने इलाहाबाद उच्च न्यायालयके आदेशका भी पालन नहीं किया, जिसमें उत्तर पुस्तिकाओंको फिरसे जांचनेका निर्देश दिया गया था। मुख्य परीक्षाको पहले ही स्थगितकर दिया था और इसके लिए १८ जूनकी तिथि निश्चित की गयी है। शीर्ष न्यायालयने अपना फैसला १४ जूनके लिए सुरक्षित रख लिया है। वस्तुतः अनेक राज्योंकी लोकसेवा आयोगकी प्रतिस्पर्धा परीक्षाओंमें शुचिताका संकट उत्पन्न हो गया है। इसके लिए परीक्षाएं आयोजित करने वाले प्राधिकारकी भूमिकापर भी प्रश्न उठते रहते हैं। परीक्षाओंकी शुचिता सुनिश्चित करनेका दायित्व सम्बन्धित प्राधिकारोंका है। शुचिताके लोप या क्षरण होनेका दुष्परिणाम छात्रोंको भुगतना पड़ता है। इसके लिए जिम्मेदारी तय होनी चाहिए कि प्राधिकारें कितनी ईमानदारीसे काम करती हैं। शीर्ष न्यायालयकी टिप्पणी उचित है। न्यायालयोंके हस्तक्षेपसे परीक्षाओंके संचालनपर प्रभाव पड़ता है। ऐसी स्थितिमें पीड़ित छात्र न्यायालयोंसे ही आस लगाते हैं। प्राधिकारोंको भी इसके लिए सचेष्ट रहना चाहिए कि ऐसी कोई स्थिति ही उत्पन्न नहीं होने पाये कि छात्रोंको न्यायालयकी शरणमें जानेको विवश होना पड़े।

लोक संवाद

जीवन पद्धति

महोदय,- पारंपरिक समाजमें प्रकृतिको देवस्वरूप माना जाता था अर्थात् मनुष्य प्रकृतिकी पूजा करता था। तब वह साम्राज्यवाद और उपनिवेशवादपर विजय प्राप्त करता था और इसी संदर्भमें गीतामें कहा गया है कि 'एक पेड़ दस पुत्रोंके समान होता है', और यही बात पारंपरिक जीवन पद्धतिके साथ भारतीय समाजमें सदैवसे प्रकृति सापेक्ष रही है। यह जीवनपद्धति प्रकृतिके साथ अपना बराबरका हिस्सा बनाकर चलती रही है। परन्तु मनुष्यने अपनी श्रेष्ठताको सिद्ध करनेके लिए प्रकृतिको दांवपर लगा दिया। जिसके लिए उसने प्रकृतिका दोहन किया। बाजारकी आवश्यकता बढ़ी और उसीके चलते साम्राज्यवाद स्थापित हुआ। महात्मा गांधीने कहा है कि 'प्रकृतिके पास इतना कुछ है कि वह जरूरत तो सबकी पूरी कर सकता है, लेकिन किसीका लालच नहीं।' पहले हरा पेड़ काटना अपराध माना जाता था, शाम होनेके बाद पेड़से फल और पत्तियां नहीं तोड़ी जाती थीं। लेकिन दृष्टि बदली, विकासने प्राकृतिक संसाधनोंका दोहन किया। पहले हर कोसकी दूरीपर तालाब होता था। प्रत्येक घरमें कुआं भी होता था। लोगोंने उसे समतल करके बिल्डिंगें बनायीं। स्थिति यह है कि न तो बारिशका पानी बाहर निकाल सकता है और न सिंचाई करनेके लिए जल संरक्षण। इन तालाबों और कुओंसे जल संरक्षण आसानीसे हुआ करता था। लेकिन अब कुएं भी पाट दिये गये हैं। जलवायुके लिए आम, महुआ, जामुन पीपल, बरगद यह सभी पेड़ विशाल और छायादार होते हैं, जो पर्यावरणके लिए समृद्ध माने जाते हैं, लेकिन अब यह भी नहीं रहे। घने और छायादार पेड़ों कि जगह बोनसाई वृक्षोंने ले लिया है। अधिक धनप्राप्तिके लालचने प्रकृतिका विनाश कर दिया है। मनुष्य अब फलदार पेड़ोंकी जगह सागौन, यूकेलिपट्स जैसे पेड़ लगाये जा रहे हैं। यह पेड़ भूमिकी नमी सोखते हैं। हरित क्रांति एक तरफ जहां औद्योगिक क्रांतिके साथ समाजमें फलीभूत साबित हुआ, वहीं दूसरी तरह इसी क्रांतिके कारण प्रकृतिसे छेड़छाड़ भी किया गया। यदि हमें प्रकृतिको बचाना है तो पर्यावरणके संरक्षणपर विशेष ध्यान देना होगा। इसके लिए हमारे पूर्वजोंने आचरणका मंत्र दिया था 'धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष' यानी धर्मके लिए अर्थको त्याग दो, अर्थके लिए कामको त्याग दो। अर्थात् यह मंत्र बताता है कि पर्यावरणकी रक्षा करनेके लिए आर्थिक लाभको त्याग देना चाहिए। इसी मंत्रका ध्यान रखते पर्यावरण संरक्षणके लिए हमें पारंपरिक समाजके साथ रिश्ता बनाये रखनेकी जरूरत है। -प्रियंका शुक्ल, मेघालय।

पुलका नाम कीनाराम रखा जाय

महोदय,-आपके पत्रके माध्यमसे उच्च अधिकारियोंका ध्यान क्षेत्रीय लोगोंकी अभिलाषा पूरी करवाये जानेकी तरफ दिलाया जा रहा है। केराकत तहसील क्षेत्रके बरैछा धामके पाससे हरिहरपुर आदि गोमती गंगापर बने नवनिर्मित पुलका नाम परम संत बाबा कीनारामके नामसे रखा जाय। यह पुल कीनारामके तपोस्थलीसे सटा हुआ है। उल्लेखनीय है कि बरैछा धाम घाटपर ३० जून २००४ को नाव दुर्घटना हुई थी जिसमें कई लोग नदीमें डूब गये थे। तभी पुल बनानेकी मांग हुई, जो बनकर तैयार हो गया है जिससे सभी लोगोंका आवागमन हमेशा लगा रहता है। जनहितमें तत्काल प्रभावी कार्य किया जाना अपेक्षित है। -महेन्द्र प्रताप सिंह, जौनपुर।

प्रशासनिक सुधार का अहम फैसला

प्रधान मंत्री मोदीने प्रशासनिक सुधारकी दिशामें बड़ा कदम उठाया है। अब सिविल सर्विसेज परीक्षाका पास करना जरूरी नहीं होगा। संयुक्त सचिव पदके लिए निजी क्षेत्रके दक्ष पेशेवर लोगोंको भी नियुक्त किया जायेगा। हमारी नौकरशाही जिस जड़ताका शिकार हो गयी है उसे गति देनेके लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण था।

❐ एन. सिंह

सीधी भर्तीका पहला प्रस्ताव २००५ में प्रशासनिक सुधारपर पहली रिपोर्टमें आया था, लेकिन तब इसे सिरेसे खारिज कर दिया गया। फिर २०१० में आयी प्रशासनिक सुधारपर दूसरी रिपोर्टमें भी इसकी सिफारिश की गयी, लेकिन पहली गंभीर पहल २०१४ में मोदी सरकारके सत्तामें आनेके बाद हुई। पीएमने २०१६ में इसकी संभावना तलाशनेके लिए समिति बनायी, जिसने अपनी रिपोर्टमें इस प्रस्तावपर आगे बढ़नेकी अनुशंसा की। मोदी सरकारका यह एक क्रांतिकारी कदम है। हमारी नौकरशाही जिस जड़ताका शिकार हो गयी है उसे गति देनेके लिए यह जरूरी था। यह देखा गया है कि जिन क्षेत्रोंकी बागडोर विशेषज्ञोंके हाथमें है उन क्षेत्रोंमें देशने शानदार प्रगति की है। अन्तरिक्ष, परमाणु ऊर्जाके क्षेत्रमें जहां आईएएसकी जगह वैज्ञानिकोंने सचिवका कार्यभार संभाला है वहां देशने सफलताके नये मानदण्ड स्थापित किये हैं। प्रधान मंत्री मोदी प्रशासनमें पेशेवर विशेषज्ञोंकी भर्तीके शुरूसे हिमायती रहे हैं। नौकरशाहीमें ऐसे प्रतिभाशाली पेशेवर लोगोंका प्रवेश होना चाहिए जो अपने-अपने क्षेत्रमें विशेष योग्यताके साथ अनुभवसे भी लैस हों, लेकिन किसी कारण इस बारेमें कोई फैसला नहीं लिया जा सका।

देर ही सही कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभागने विभिन्न क्षेत्रोंके मेधावी एवं अनुभवी पेशेवर लोगोंके आवेदन मांगकर एक नयी शुरुआत की है। सरकार दस ऐसे उत्कृष्ट व्यक्तियोंको खोज रही है जिन्हें राजस्व, वित्तीय सेवाओं, आर्थिक विषयों, कृषि, सहकारिता एवं कृषक कल्याण, सड़क परिवहन और राजमार्ग, नौवहन, पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन, नवीन एवं अक्षय ऊर्जा, नागरिक विमानन और वाणिज्यके क्षेत्रोंमें महारत हो। भले वह निजी क्षेत्रसे क्यों न हों। कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभागके परिपत्रमें कहा गया है, 'सरकार राष्ट्र निर्माणमें योगदान करनेको इच्छुक मेधावी एवं उत्साही भारतीयोंको संयुक्त सचिव स्तरपर सरकारसे जुड़नेके लिए निमंत्रित करती हैं।' इस पहलको सरकारमें वरिष्ठ पदोंपर सीधी भर्तीके रूपमें देखा जा रहा है। यह नियुक्ति अनुबंधके आधारपर होगी और अनुबंध तीन सालका होगा। उम्मीदवारके प्रदर्शनके आधारपर अनुबंधकी अवधि पांच सालतक बढ़ायी जा सकती है। संयुक्त सचिव भारत सरकारमें वरिष्ठ प्रबंधनका अहम स्तरका पद होता है। वह नीति निर्माणमें तथा उसे सौंपे गये विभागके विभिन्न कार्यक्रमों एवं योजनाओंके क्रियान्वयनमें अगुवाई करते हैं। इससे नौकरशाहीमें सुधार आयेगा एक राष्ट्र-राज्यके रूपमें भारतने अपनी यात्रा गहरे अंतर्विरोधोंके साथ शुरू की।

हमने राज्य व्यवस्थाका ढांचा अपनी इच्छाके अनुसार खुद गढ़ा लेकिन इसके कामके औजार ब्रिटिश राज्यसे उधार लिये। अतीतकी यह विरासत अबतक बरकरार है। प्रशासनिक पुनर्गठनके लिए आजादीके बाद २५ से अधिक समितियों और आयोगोंका गठन हो चुका है, परन्तु यह अंतर्विरोध कायम हैं। इन समितियों-आयोगोंकी वजहसे नये रास्ते तो खुले नहीं, हां वातावरणमें कोरी बहसोंसे उठा गर्द-गुबार जरूर फैला। हमने जब स्वतंत्रताप्राप्तिके बादकी यात्रा शुरू की तो यह सोचा गया कि ज्यों-ज्यों राज्य व्यवस्था और सम्पूर्ण सामाजिक-राजनीतिक परिवेशमें बुनियादी बदलाव आते जायेंगे, त्यों-त्यों लोक प्रशासनके चरित्रमें स्वमेव परिवर्तन आता जायेगा। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। इसी बीच एक और बात हुई, जिसके कारण एक नया गठजोड़ अस्तित्वमें आया। स्वतंत्र भारतमें लिये गये प्रारम्भिक निर्णयोंमेंसे एक सामाजिक-आर्थिक नियोजनके सम्बन्धमें था। भारतने एक व्यापक तंत्रवाली नियंत्रण प्रणालीपर आधारित केन्द्रीयकृत योजना पद्धति अपनायी। औपनिवेशिक कार्यप्रणालीमें प्रशिक्षित नौकरशाहोंको इस पद्धतिकी वजहसे नये शासनमें भी पर्याप्त स्थान मिल गया। औपनिवेशिक कार्यप्रणालीमें प्रशिक्षित नौकरशाहोंको इस पद्धतिकी वजहसे नये शासनमें भी पर्याप्त स्थान मिल गया। औपनिवेशिक शासनकालमें नौकरशाह जनताके कंधोंपर सवार रहता था, आजादीके बाद भी उसका शासन और प्रभुत्व बरकरार रहा।

विकासकी नयी शैलीके अन्तर्गत वह जनतापर कंट्रोल, लाइसेंस और परमिटके माध्यमसे राज करने लगा। इस तरह ब्रिटिशराजके शासन मूल्य और परमिटराजके अंतर्तत्व काफी कुछ एक जैसे थे। चूंकि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाकी बागडोर राज्यके कब्जेमें आनी थी इसलिए पेशेवर नौकरशाहों और राजनीतिज्ञोंको एक साझा उद्देश्य मिल गया और उन्होंने झटपट हाथ मिला लिये। इस नये परिदृश्यमें राजनीतिज्ञों और नौकरशाहों, दोनोंने चैनकी सांस ली। स्वतंत्रताप्राप्तिके समयसे ही भारतीय संविधान और देशके सार्वजनिक प्रशासनके बीच व्याप्त अंतर्विरोधको पूरी तरह अनदेखा कर दिया गया। यदि नौकरशाही वर्तमान परिस्थितियोंमें स्वयंको उपयोगी सिद्ध करना चाहती है तो उसे राज्यके वर्तमान लक्ष्योंके अनुरूप ही ढलना होगा। अब राज्यको नियंत्रक और नियामककी अपनी पूर्व भूमिका त्याग कर प्रोत्साहक और मददगारकी भूमिका निभानी होगी। सार्वजनिक प्रशासनको भी आधारभूत ढांचे और सामाजिक सेवाओंके विकास तथा गरीबी और बेरोजगारीसे संघर्षमें महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। यह सारी परिस्थितियां सार्वजनिक प्रशासनके पुनर्गठनके लिए प्रेरित करती है। सरकारी मशीनरीकी पुर्नरचना की जानी चाहिए।

कुछ समय पहले इन्फोसिसके संस्थापक एन.आर. नारायणमूर्तिने कहा था कि आईएएसको समाप्त कर उसकी जगह इंडियन मैनेजमेंण्ट सर्विसका गठन किया जाना चाहिए, जिसमें विभिन्न क्षेत्रोंके विशेषज्ञोंको रखा जाये। उनका कहना था कि भारतीय नौकरशाहीका माइंडसेट और ढांचा आजके समयके अनुकूल नहीं रह गया है। कई लोगोंका यह आरोप भी रहा है कि सिविल सेवाकी परीक्षाका ढांचा अंततः रट्टू तोतों या किताबी कीड़ोंकी जमात ही खड़ी करता है। जिसका समाजके यथार्थसे कोई लेना-देना नहीं होता। इस मामलेमें एक पेंच यह भी है कि ऐसे विशेषज्ञ आईएएस अधिकारियोंके बीच कितना काम कर पायेंगे क्योंकि उनके ऊपर और नीचेके अधिकारी कितनी उनकी बात मानेंगे। लेकिन इस डरसे कोई सुधार नहीं हो, इसे तो उचित नहीं कहा जा सकता। इस समय सरकारी काम काजपर रहस्यका अनावश्यक आवरण चढ़ा हुआ है। यह स्थिति हास्यास्पद है। भारतीय लोक प्रशासनको खुदको पर्देमें छिपाये रखनेके बजाय, सूरजकी खुली रोशनीमें आना चाहिए। इससे उसमें व्याप्त प्रदूषणका भी परिष्कार होगा ताकि प्रशासनको उत्तरदायी बनानेके लिए भरपूर सख्ती बरतनी चाहिए और कामका मूल्यांकन करते समय तथा स्थानान्तरण नीति बनानेमें इस ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

भ्रष्टाचारपर चर्चा न की जाय तो प्रशासनिक सुधारोंका एजेंडा बिल्कुल खोखला और अविश्वसनीय लगेगा। लोक प्रशासनके लिए सर्वाधिक लज्जाका विषय भ्रष्टाचार ही है। आजादीके बादके ५० सालोंमें जैसी धोखाधड़ी भारतीय जनताके साथ की गयी है, उसकी मिसाल शायद ही कहीं और मिले। जनताके धनको लूटनेमें कोई कसर नहीं छोड़ी गयी और लूटमें राजनेता और नौकरशाह दोनों शामिल रहे हैं।

सन् १९४९ के जीप घोटालेसे लेकर बीमा, बोफोर्स, टूजी, कोयला घोटालोंकी लम्बी सूची है। उत्तर प्रदेश और बिहारमें तो कुछ क्षेत्रीय दलोंने चीनी मिलोंकी बिक्री और चारा घोटालेमें जमकर लूटपाट की। कई मंत्री तो सरकारी फाइलोंको सोनेकी खान समझते रहे हैं। उनके लिए फाइल पैसा दूहनेका जरिया बन गयी थी। इसलिए किसी महत्वपूर्ण सुधारके लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति और संकल्पकी आवश्यकता होती है। लेकिन यह तथ्य देशमें सुधारकोंके लिए सबसे बड़ी परेशानीका सबब बन गयी है। इसलिए मोदी सरकार नौकरशाहीको लेकर जो सुधार करने जा रही है उसका कुछ नेता विरोध कर रहे हैं। हालांकि इन नेताओंपर भ्रष्टाचारके गंभीर आरोप हैं और उसकी जांच चल रही है। परन्तु सरकारका यह प्रयोग सफल रहा तो देशके प्रशासनिक ढांचेमें बड़ा बदलाव आ सकता है।

आरोप रहा है कि सिविल सेवाकी परीक्षाका ढांचा अंततः रट्टू तोतों या किताबी कीड़ोंकी जमात ही खड़ी करता है। जिसका समाजके यथार्थसे कोई लेना-देना नहीं होता। व्यावहारिक जीवनसे कटे यह लोग अव्यवहारिक फैसले कैसे करते हैं और जनताको व्यवस्थासे जोड़नेके बजाय और दूर ले जाते हैं। इस मामलेमें एक पेंच यह भी है कि ऐसे विशेषज्ञ आईएएस अधिकारियोंके बीच कितना काम कर पायेंगे क्योंकि उनके ऊपर और नीचेके अधिकारी कितनी उनकी बात मानेंगे। सरकारका यह प्रयोग सफल रहा तो देशके प्रशासनिक ढांचेमें बड़ा बदलाव आ सकता है।

अखिलेश ने खराब की छवि

अखिलेश द्वारा खाली किये गये बंगलेकी तस्वीरसे राजनीतिज्ञोंकी छवि खराब हुई है। संदेश गया कि यह लोग जनताके पैसेको हड़पनेमें कोई कोर-कसर नहीं छोड़ते। ऐसे लोग जनताके हितैषी कैसे हो सकते हैं।

❐ विष्णुगुप्त

अखिलेश यादव द्वारा खाली किये गये बंगलेकी जो तस्वीर सामने आयी हैं उससे न केवल अखिलेश, बल्कि राजनीतिज्ञ बिरादरीकी छवि खराब हुई है। संदेश यह गया है कि राजनीतिज्ञ कितने लालची होते हैं, यह सरकारी बंगलेके टाइल्स उखाड़ कर और नलकी टोटीतक उखाड़ कर ले जाते हैं। ऐसे राजनीतिज्ञ जनताके हितैषी कैसे हो सकते हैं। अखिलेश उत्तर प्रदेशके मुख्य मंत्री रह चुके हैं, उनके खिलाफ आयसे अधिक संपत्ति कोर्टमें लंबित है इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि अखिलेश गरीबीमें ऐसा करनेके लिए विवश हुए। सबसे बड़ी बात यह है राजनीतिज्ञ और नौकरशाही मिलकर न केवल सरकारी धनका लूट मचाते हैं, सरकारी धनका बंदरबांट करते हैं। अखिलेशने सचको स्वीकार करनेसे इनकार कर दिया है। अब वह कह रहे हैं कि यह कारस्तानी उनके विरोधियोंकी है, फिर भी वह टाइल्स, नलकी टोटी सहित उन सभी वस्तुओंके मूल्य चुकानेके लिए तैयार हैं जिन्हें गायब पाया जा रहा है। भारतीय राजनीतिमें अपनी कारस्तानी सामने आनेपर और घोटाला पकड़में आनेपर राजनीतिज्ञ बड़े आसानीसे अपने आपको पीड़ित घोषित कर देते हैं।

पूर्व मुख्य मंत्रियोंका आलीशान बंगला ही जंगलराजका प्रतीक था। जिस देशकी अधिकतर जनता अभावोंमें रहती है, उस देशके राजनीतिज्ञोंकी ऐसे ठाठ-बांट और ऐशोआरामके संसाधनोंके बीच मौज-मस्ती करना, जंगलराजके प्रतीक हैं। खासकर मायावती और अखिलेशके बंगलोंकी चर्चा आम लोगोंकी जुबानपर है। सरकारी बंगला तो कल्याण सिंह और राजनाथ सिंहके पास भी था। परन्तु इन दोनों नेताओंने सुप्रीम कोर्टका फैसला आते ही बंगला खाली कर दिया। राजनाथ सिंह और कल्याण सिंहने बंगले सही सलामत सौपे थे। परन्तु सुप्रीम कोर्टके आदेशके बाद मुलायम सिह यादव अपने बेटेके साथ मुख्य मंत्री योगीके पास पहुंचे थे। इन्होंने मुख्य मंत्री योगीको सलाह दे डाला था कि नया आदेश जारी कर सुप्रीम कोर्टका आदेश शिथिल किया जाय। इसके अलावा अखिलेश और मुलायमने अपने बंगलोंका आंवटन अपने विधायकोंके नामपर करनेके लिए कहा। यदि इनके बंगलोंका आंवटन विधायकोंके नाम कर दिया जाता तो निश्चित तौरपर अखिलेश और मुलायम सिंह यादव अपने बंगले बचा लेते और फिर उन्हें खाली करनेकी नौबत ही नहीं आती। लेकिन योगी राजी नहीं हुए। एक तो सुप्रीम कोर्टका आदेश था, सुप्रीम कोर्टके आदेश नहीं माननेपर सरकारको अवमाननाका मुकदमा झेलना पड़ सकता था। इतना ही नहीं ,बल्कि जनताके बीचमें योगीकी छवि खराब होती। मुलायम और अखिलेश सुप्रीम कोर्ट भी पहुंचे। परन्तु सुप्रीम कोर्टने कोई राहत देनेसे इनकार कर दिया। इस कारण मुलायम और अखिलेशकी बड़ी किरकिरी तो पहले ही चुकी थी।

मायावती तो सीधे तौर बगला हड़पनेकी पैंतरेबाजीपर उतर आयीं। वह अपने आंवटित बंगलेकी जगह दूसरे बंगलेकी चाभी प्रशासनको सौपनेके लिए भेज दिया। जब प्रशासनने चाभी लेनेसे इनकार कर दिया तो फिर चाभी स्पीड पोस्टसे भेज दिया गया। प्रशासनने फिर इनकार कर दिया और प्रशासनने कह दिया कि उसी बंगलेको खाली करना होगा जिस बंगलेको खाली करनेका सुप्रीम कोर्टने आदेश दिया था। फिर मायावती पैंतरा बदलती है। रातोरात एक बोर्ड लाग दिया जाता है और उस बोर्डपर लिखा होता है कि यह बंगला काशीराम विश्राम स्थल है। जबकि सुप्रीम कोर्ट आदेशके पूर्व ऐसा कोई बोर्ड ही नहीं लगा था। बोर्ड लगानेके पीछे बड़ी साजिश थी। अब प्रश्न यह उठता है कि काशीराम विश्राम स्थलका बोर्ड लगानेके पीछे साजिश थी कि काशीरामके हथकंडेसे बंगला खाली करनेसे बचना और दलितोंकी सहानुभूति पाना। दलितोंके बीच यह संदेश देनेकी कोशिश हुई थी कि मायावतीके दलित होनेके कारण सुप्रीम कोर्ट और योगी सरकार बंगला खाली कराना चाहती है। कई दलित नेताओंने फौरन इस बातपर सहमति जता डाली थी कि काशीरामके विरासतके साथ योगी सरकार खिलवाड़ कर रही है और उस बंगलेको कांशीरामके विरासतके तौरपर सहेजा जाना चाहिए। जबकि वह बंगला कभी भी काशीराम विश्राम स्थलके रूपमें विख्यात नहीं था, बल्कि उस बंगलेको मायावती निजी तौरपर इस्तेमाल करती थीं।

मायावती और अखिलेशने जिस तरहसे बंगलेपर राशि खर्च की थी वह भी एक विचारणीय प्रश्न है। कहा यह जाता है कि मायावतीने उस सरकारी बंगलेको सजाने और उसे एक महलके रूप देनेमें तीन सौ करोड़ रुपये खर्च किये। अखिलेशने अपने सरकारी बंगलेके उपर भी करीब सौ करोड़ रुपये खर्च किये थे। आखिर राजनीतिज्ञोंको अपनी इच्छानुसार मौज-मस्तीकी छूट देने और इतनी बड़ी राशि खर्च करनेपर रोक क्यों नहीं लगनी चाहिए। पहलेके नेताओंमे सादगी होती थी परन्तु आजके दौरके नेता अपनी इच्छाओंकी पूर्तिके लिए सरकारी धनको पानीकी तरह बहानेसे भी नही चूकते हैं। सरकारी धन जनताके टैक्ससे जमा होता है। इसलिए राजनीतिज्ञोंकी ऐसी मौज-मस्ती और ऐसे आरामदेह रहन-सहन देशके गरीब जनताका अपमान है।

अवांछनीय प्रतिक्रिया

❐ श्रीराम शर्मा

कई बार मनुष्य अपने अनुचित कार्यों और आदतोंके संबंधमें दुखी भी होता है और सोचता है कि उन्हें छोड़ दूं। अवांछनीय अभ्यासोंकी प्रतिक्रिया उसने देखी-सुनी भी होती है। परामर्श उपदेश भी उसी प्रकारके मिलते रहते हैं, जिनमें सुधारने-संभालनेके लिए कहा जाता है। सुननेमें वह परामर्श सारगर्भित भी लगते हैं। किंतु जब छोड़नेकी बात आती है तो मन मुकर जाता है अभ्यस्त ढर्रेको छोड़नेके लिए सहमत नहीं होता है। नशेबाजोंमें यही प्रक्रिया आये दिन चरितार्थ होते देखी जाती है। बार-बार सुधरनेकी बात सोचने और समय आनेपर उसे न कर पानेसे मनोबल टूटता है। बार-बार टूटनेपर वह इतना दुर्बल हो जाता है कि यह विश्वास ही नहीं जमता कि उनका सुधार हो सकता है। आश्चर्यकी बात यह है कि मनुष्य अपने मनका स्वामी है। शरीरपर भी उसका अपना अधिकार है। सामान्य जीवनमें वह अपनी अभिरुचिके अनुरूप सोचता है और आवश्यकतानुसार कार्य करता है। यह स्वाभाविक भी है और इसी विधाको चरितार्थ होते हुए भी देखा जाता है। फिर दुष्प्रवृत्तियोंके संबंधमें ही ऐसी क्या बात है, जिसके कारण वह चाहते हुए भी नहीं छूटती? प्रयत्न करनेपर भी भूत की तरह सिरपर लदी रहती है। अंधविश्वास कुप्रचलन इसी आधारपर अपनी जड़ जमाये हुए हैं। अनेक कुरीतियां ऐसी हैं, जिन्हें बुद्धि विवेक और तर्कके आधारपर हर कोई अस्वीकार ही करता है, किंतु जब करनेका समय आता है तो पुराने ढर्रेपर चल पड़ते हैं। महापुरुषोंके कुछ अपने गुण, कर्म और स्वभाव ही ऐसे होते हैं, जो महत्वपूर्ण लोकोपयोगी कार्योंमें लगते हैं अवरोधोंसे जूझते हुए लक्ष्यतक पहुंचनेका साहस प्रदान करते हैं। उन्हें अनुकरणीय और अभिनंदनीय माना जाता है। उनकी उपलब्धियों प्रशंसा, प्रतिष्ठाको देखकर अनेकोंका मन जलता है कि हमें भी यह सुयोग मिला होता तो कितना अच्छा होता। इस दिशामें वह सोचते तो बहुत हैं, परन्तु ऐसा कर नहीं पाते। सोचते, मन मारते ही जिंदगी बीत जाती है। मनुष्योंमेंसे कम ही ऐसे हैं, जो साहस करके अपनी पतनोन्मुखी प्रवृत्तियोंको रोक सकें और असंतोषजनक बदनाम जीवन जीनेसे बच सकें।

किसानों की समस्या का समाधान जरूरी

❐ ओमप्रकाश सिनहा

आजादीके बाद किसानोंकी अनेक समस्याएं सामने आती गयीं और सरकार बनती एवं बदलती गयी। कुछ काम हुआ लेकिन जो किसानोंसे वादा किया गया उसमें कहीं न कहीं चूक जरूर हुई है जिसपर सरकारको तत्परतासे ध्यान देनेकी जरूरत है। महाराष्ट्रके किसानोंकी तुलनामें मध्यप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा समेत अन्य कई राज्योंके किसान संघटनोंके तेवर काफी कुछ अलग हैं। दस दिनोंके लिए गांव बन्दके जरिये किसान संघटन स्वामीनाथन आयोग समितिको जिन सिफारिशोंपर अमलकी मांगको लेकर आन्दोलनरत हैं उनमेंसे कई सिफारिशोंके प्रति सरकारका रुख सकारात्मक है। केन्द्र सरकारने इस वर्ष बजट सत्रमें यह घोषणा भी कर दी है कि किसानोंको उनकी आयका मूल्य लागतसे डेढ़ गुना दिया जायगा। उसने यह भी स्पष्ट किया है कि लागत मूल्यका निर्धारण किसानोंके हितोंके अनुकूल होगा। जबतक यह नहीं होता तबतक किसानोंके मनमें सन्देह होने लगा है इसे दूर करनेके लिए उपाय करना होगा। किसान संघटनोंको भी यह समझना होगा कि सम्पूर्ण कृषि कर्जकी माफीकी मांग किसीके हितमें नहीं कृषक नेताओंको समझना होगा किसान जबतक कर्ज लेनेकी स्थितिमें होगा तबतक उसका भला नहीं हो सकता।

सरकार २०२२ तक किसानोंकी आय दोगुना करनेके लिए संकल्पबद्ध है लेकिन किसानोंकी हालतमें उतनी तेजीसे सुधार होता नहीं दिखता जिससे यह माना जाने लगे कि अगले चार सालोंमें खेती मुनाफेका सौदा बन जायगी। लागत मूल्यके निर्धारणकी प्रक्रिया जो भी हो, वह किसानोंके हितोंकी पूर्ति करने और उन्हें सन्तुष्ट करनेवाली होनी चाहिए। किसान संघटन और सरकार आमने-सामने हैं। इसके साथ ही छोटे और सीमान्त किसानोंके हितमें अनेक मांगे उठायी गयी हैं। आजादीके पहले ब्रिटिश सरकार किसानोंका शोषण अपना राजस्व भरनेके लिए तथा अपनी सत्ताको मजबूत बनाये रखनेके लिए करती थीं। आजादीके बाद देशमें किसान संघटन बनें। लेकिन इसका स्वरूप राष्ट्रीय बननेके पहले ही किसान संघटनोंकी अवधारणाका राजनीतिक दलों द्वारा अपहरण कर लिया गया। स्वतन्त्र भारतकी यही विडम्बना कही जायगी कि सोना उगलनेवाले खेतोंपर ऊंची इमारतें बनने लगीं और किसान दूसरे पेशेका रुख करने लगे। उदारीकरणके बाद सेवा क्षेत्र सहित अन्य कई विकल्प सामने आये और सरकारें उनपर ध्यान देती रहीं।

कृषि क्षेत्रके लिए नीतियों वैश्विक कृषि प्रतिस्पर्धा, किसानोंकी सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक सुरक्षाको लेकर केन्द्रकी सरकारने गम्भीरतासे कोई काम नहीं किया। इस तरह भारतीय कृषि संकटमें पड़ गयी। किसान संघटनोंके स्वरूपमें भी भारी बदलाव आया है। यदि गैर-राजनीतिक किसान संघटनको गिनने लगे तो निराशा हाथ लगेगी। राजनीतिक दलोंने अपने वोट बैंकके लिए किसान विंग बना रखी है। उनका मकसद किसानोंके अधिकारोंकी बात करनेके बजाय किसानोंको लामबन्द कर अपनी विचारधारासे जोड़कर वोट हासिल करना होता है। भले ही किसान विंगके कार्यकर्ता किसान होते हैं किन्तु वह सम्बन्धित राजनीतिक दलके कार्यकर्ताओंमें बंट गये हैं। इन किसान प्रकोष्ठोंने ही किसान आन्दोलनको क्षति पहुंचायी है। इस बीच कुछ गैर-सरकारी संघटन जरूर किसान हितोंके लिए आगे आये हैं किन्तु उनकी नीयत कितनी साफ है यह कहना अभी कठिन है। किसान इस बातको जोर देकर कह रहे हैं कि जबतक मांगें नहीं मानी जायंगी तबतक आन्दोलनको लेकर लम्बा खींचनेके लिए सभी किसान इस बार पूरी तैयारीके साथ मैदानमें उतरे हैं। सैकड़ों किसान संघटन एकजुट होकर सामूहिक रूपसे अपना आक्रोश सरकारके प्रति जता रहे हैं। किसानोंको इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि आन्दोलन हिंसक न हो। अमन-शान्तिको लेकर भी अपनी बात सरकारतक पहुंचायी जा सकती है। इसमें दो राय नहीं कि कुछ सालोंसे किसानोंकी हालत दयनीय हुई है। भारी कर्जके बोझसे दबे किसान आत्महत्या करनेपर मजबूर हो रहे हैं। आंकड़ोंके अनुसार पिछले तीन सालोंमें ३६ हजार किसानोंने आत्महत्या की है। कई क्षेत्रोंमें आन्दोलनका प्रभाव तेजीसे बढ़ा है। आगरा, मालवा, खंडवा, खरगोन, ग्वालिया, बुरहानपुर, भोपाल, मंदसौर, मुरैना, रतलाम, राजगढ़,रायसेन, राजापुर, श्योपुर, सीहोर, हरदा, ऐटा, इटावा और होशंगवाद ऐसे क्षेत्र हैं जहां आन्दोलनका प्रभाव ज्यादा है। स्थिति और ज्यादा न बिगड़े इसके लिए राज्य सरकारों और केन्द्रकी सरकारको तत्काल प्रभावसे किसान नेताओंसे बात करनेकी जरूरत है। बिना अन्नदाताकी सन्तुष्टिके देशका भला होना कठिन हो जायगा। किसानों और गांवोंके देशमें इस तरहका आन्दोलन आमजनके लिए दुखदायी होगा।

यदि किसान संघटन राजनीतिक दलोंके चक्करमें पड़ेंगे तो क्षेत्रीय पार्टियोंकी तरह उनका भी संघटन धीरे-धीरे टूट सकता है। शायद हमारे नेता जानते, क्योंकि बीते कुछ दशकोंमें उन्होंने खेती और पशुपालनकी जो दुर्गति की है वह हमें कहां ले जाकर छोड़ेगी। यह समझना मुश्किल है। किसानोंकी समस्याओंका तात्कालिक हल ढूंढ़नेके बजाय राजनीतिक लाभ लेनेकी कोशिश करनेसे स्थिति और बिगड़ती जायगी। अच्छी बात तो यही है कि अभीतक किसानोंको भड़काकर हिंसा कराने और सरकारको कठघरेमें डालनेकी कोशिश इस बार नहीं दिखती वरना हालके समयमें जब भी आक्रोशित किसान निकले हैं, हिंसा जरूर हुई है। अब भी किसानमों जो गुस्सा दिख रहा है जिसमें वह अपने खून-पसीनेसे तैयार उत्पादोंको सड़कपर फेंक रहे हैं। किसान संघटन और सरकारोंकी बुद्धिमानी इस समय यही होनी चाहिए कि आपसमें मिलकर इसका हल निकाला जाय ताकि देशके विकासमें बाधा न बढ़ने पाये।